ओ३म्

एक प्रति मूल्य : रु० 3.50

सन् 1923 में स्वामी श्रद्धानन्द जी द्वारा स्थापित

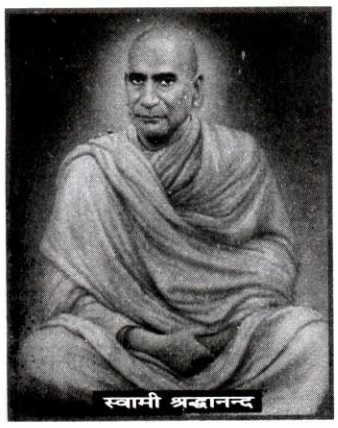

शुद्धि समाचार

भारतीय हिन्दू शुद्धि सभा का मासिक मुखपत्र

वर्ष 36 अंक 4 "शुद्धि ही हिन्दू जाति का जीवन है" दूरभाष : 011-23847244

अप्रैल, 2013 विक्रम सम्वत् 2070 चैत्र-वैशाख सनातन धर्मी नेता - पं. मदनमोहन मालवीय वार्षिक शुल्क : 50 रुपये

परामर्शदाता : श्री हरबंस लाल कोहली ☼ श्री विजय गुप्त ☼ श्री सुरेन्द्र गुप्त ☼ प्रबन्धक : श्री नरेन्द्र मोहन वलेचा

सत्यार्थ प्रकाश

ऋषि दयानन्द का जन्म 1824 ई. में हुआ था। वे 1860 में गुरु विरजानन्द जी के पास विद्याध्ययन के लिए पहुंचे। उस समय उनकी आयु 36 वर्ष थी। 1863 में उन्होंने अपने गुरु से दीक्षा ली और उनके पास से अध्ययन समाप्त कर जीवन-क्षेत्र में उतर पड़े। इस समय वे 39-40 वर्ष के हो चुके थे। विरजानन्द जी के पास उन्होंने जो - कुछ सीखा वही उनकी वास्तविक शिक्षा थी क्योंकि इससे पहले वे जो कुछ पढ़ आये थे उसे विरजानन्द जी ने भुला देने की उनसे प्रतिज्ञा ले ली थी। इसी प्रकार ऋषि दयानन्द जी की यथार्थ शिक्षा 1860 से 1863 तक - अर्थात् कुल तीन वर्ष ही हुई थी। उन्होंने पीछे चलकर अपने जीवन-काल में जितने व्याख्यान दिये, जितने ग्रंथ लिखे, जितने शास्त्रार्थ किये, वह इन तीन वर्षों के अध्ययन का ही परिणाम था। इसी से स्पष्ट होता है कि इन तीन वर्षों में उन्होंने जो पाया था वह कितना मूल्यवान था।

अपने गुरु विरजानन्द जी से ऋषि दयानन्द ने जो गुर पाया था वह आर्य तथा अनार्ष ग्रन्थों में भेद करना था। 36 वर्ष की आयु से पहले उन्होंने जो कुछ पढ़ा था वह अनार्ष ग्रन्थों का अध्ययन था। आर्ष ग्रन्थों के अध्ययन का उनका कुल समय तीन वर्षों का था। इन तीन वर्षों के अध्ययन ने उनके जीवन, उनकी विचारधारा में जो क्रान्ति उत्पन्न कर दी उससे भारत के पिछले सौ वर्षों का इतिहास बन गया।

जिन्होंने सत्यार्थ-प्रकाश का गहराई से अध्ययन किया है उन्होंने पाया है कि इसमें 377 ग्रन्थों का वर्णन है। इस ग्रन्थ में वेद मन्त्रों या श्लोकों के उद्धरण दिये गये हैं। चारों वेद, सब ब्राह्मण ग्रन्थ, सब उपनिषद्, छहों दर्शन, अठारह स्मृति, सब पुराण, सूत्र ग्रन्थ, गृह्य सूत्र, जैन-बौद्ध ग्रन्थ, बाइबल, कुरान सबके उद्धरण ही नहीं, उनकी व्याख्या की गयी है। किस ग्रन्थ में, कौन-सा मन्त्र या श्लोक, या वाक्य कहाँ है, उसकी संख्या क्या है-यह सब कुछ इस साढ़े तीन महीनों में लिखे ग्रन्थ में मिलता है। आज का कोई रिसर्च स्कालर (संशोधक) अगर किसी विश्वविद्यालय की संस्कृत अप-टु-डेट लायब्रेरी (अद्यतन पुस्तकालय) संदर्भ में, जहां सब ग्रन्थ उपलब्ध हों, इतने रेफरेंस वाला कोई ग्रन्थ लिखना चाहे, तो भी उसे वर्षों लग जायें, जिसे ऋषि दयानन्द ने साढ़े तीन महीनों में तैयार कर दिया था। साधारण ग्रन्थ की बात दूसरी है, सत्यार्थ-प्रकाश एक मौलिक विचारों का ग्रन्थ है, ऐसा ग्रन्थ जिसने समाज को एक सिरे से दूसरे सिरे तक हिला दिया। जिन ग्रन्थों ने संसार को झंझोरा है उनके निर्माण में सालों लगे हैं। कार्ल मार्क्स ने 34 वर्ष इंग्लैण्ड में बैठकर 'कैपिटल' ग्रन्थ लिखा था जिसने विश्व में नवीन आर्थिक दृष्टिकोण को जन्म दिया, किन्तु ऋषि दयानन्द ने 'सत्यार्थ-प्रकाश' साढ़े तीन महीनों में लिखा था जिसने नवीन सामाजिक दृष्टिकोण को जन्म दिया। दोनों का क्षेत्र अलग-अलग था, मार्क्स के ग्रन्थ ने यूरोप का आर्थिक ढाँचा हिला दिया, ऋषि दयानन्द के ग्रन्थ ने भारत का सांस्कृतिक तथा सामाजिक ढाँचा हिला दिया।

सत्यार्थ-प्रकाश चुने हुए क्रांतिकारी विचारों का खजाना है- ऐसे विचार जिन्हें उस युग में कोई सोच भी नहीं सकता था। समाज की रचना 'जन्म के आधार पर न होकर 'कर्म' के आधार पर होनी चाहिए सत्यार्थ प्रकाश का यही एक विचार इतना क्रांतिकारी है कि इसके क्रिया में आने से हमारी 90 प्रतिशत समस्याएं हल हो जाती हैं। ऐसे संगठन में जन्म से न कोई नीचा, न कोई ऊंचा, न कोई जन्म से गरीब, न कोई अमीर, जो कुछ हो कर्म से हो- ऐसी स्थिति में कौन-सी समस्या है जो इस सूत्र से हल नहीं हो जाती है। शिक्षा के क्षेत्र में गुरुकुल शिक्षा-प्रणाली का विचार सत्यार्थ-प्रकाश की ही देन है जिसे पकड़कर उत्तर-भारत में जगह-जगह गुरुकुलों का तांता बिछ गया। आज भी हमारी शिक्षा प्रणाली की जो छीछालेदार हो रही है उसका इलाज गुरुकुल-शिक्षा-प्रणाली के सिद्धान्तों में ही निहित है। स्वराज्य हमारा जन्म सिद्ध अधिकार है। दादाभाई नौरोजी ने 'स्वराज्य' शब्द का प्रयोग किया था।

इन सबसे पहले ऋषि दयानन्द ने सत्यार्थ-प्रकाश के 9वें समुल्लास में लिखा था - 'कोई कितना ही कहे, परन्तु जो स्वदेशीय राज्य होता है, वह सर्वोपरि उत्तम होता है। 'ऋषि दयानन्द के ये वाक्य उस जगत-प्रसिद्ध अंग्रेजी वाक्य से, जिसमें कहा गया है *Good government is no substitute for self government*, इतने मिलते-जुलते हैं कि अंग्रेजों के राज्य में कोई व्यक्ति यह लिखने का साहस कर सकता हो- यह जानकर आश्चर्य होता है। आज जिन समस्याओं को लेकर हम उलझे रहते हैं, हरिजनों की समस्या, स्त्रियों की समस्या, गरीबी की समस्या, शिक्षा की समस्या, देश-भाषा की समस्या, चुनाव की समस्या, नियम तथा व्यवस्था की समस्या, विनोबा भावे की गो-रक्षा की समस्या, नसबन्दी की समस्या, आचार की समस्या,

विनम्र निवेदन

वर्तमान समय में शुद्धि कार्य का महत्व और बढ़ गया है, क्योंकि स्वतन्त्रता के पश्चात् भी भारत देश में धर्मान्तरण बहुत तेजी से चल रहा है, जबकि हमारे पड़ोसी देशों म्यांमार, श्रीलंका आदि में यह समाप्त हो चुका है। आर्य महानुभावों एवं धर्म प्रेमी सज्जनों से निवेदन है कि शुद्धि कार्य को बढ़ाने के लिए अपने-अपने सुझाव एवं सहयोग देने की कृपा करें और पुण्य के भागी बनें।

रामनाथ सहगल (प्रधान) नरेन्द्र मोहन वलेचा (महामन्त्री) हरबंसलाल कोहली (कार्यकारी प्रधान)

नवयुवकों की समस्या कौन सी समस्या है जिसका हल सत्यार्थ-प्रकाश में मौजूद नहीं है। और कौन-सा हल है जो आज के राजनीतिज्ञों ने ऐसा ढूंढ निकाला है जो सत्यार्थ-प्रकाश में पहले से नहीं है।

हिन्दू समाज की सबसे बड़ी समस्या वेदों की थी। यहाँ हर-कोई हर बात के लिए वेदों का नाम लेता था। स्त्रियों तथा शूद्रों को वेद पढ़ने का अधिकार क्यों नहीं? क्योंकि वेदों में लिखा है स्त्री शूद्रौ नाधीयाताम्। बाल-विवाह क्यों नहीं होना चाहिए? क्योंकि वेदों में लिखा है- 'अष्टवर्षा भवेत् गौरी नववर्षा च रोहिणी, दश वर्षा भवेत् कन्या तत उर्ध्व रजस्वला। माता चैव पिता तस्या ज्येष्ठो भ्राता तथैव च। त्रयस्ते नरकं यान्ति दृष्ट्वा कन्यां रजस्वलाम्।' जन्म से वर्ण-व्यवस्था क्यों माने? क्योंकि वेद में लिखा है- ब्राह्मणोऽस्य मुखमासीत्' ब्राह्मण परमात्मा के मुख से और शूद्र उसके पांव से उत्पन्न हुए। जैसे मुख बाहू और बाहू मुख नहीं बन सकता। इसी प्रकार ब्राह्मण शूद्र तथा शूद्र ब्राह्मण नहीं बन सकता। जब ऋषि दयानन्द ने यह देखा कि वेदों का नाम लेकर संस्कृत वाक्य को वेद कहा जा रहा है, और वेदों का उद्धरण देकर वेद-मन्त्रों का अनर्थ किया जा रहा है, और वेदों को ही केन्द्र बना कर हिन्दू-समाज की रक्षा की जा सकती है, और वह रक्षा तभी हो सकती है जब जन-साधारण को समझ पड़ जाय कि वेदों में कहा क्या गया है। ऋषि दयानन्द ने वेदों से वेदों पर प्रहार किया।

वैदिक वाङ्मय के संबंध में ऋषि दयानन्द की खोज यह थी कि हर संस्कृत-ग्रंथ वेद नहीं है। ब्राह्मण ग्रंथ, उपनिषद, स्मृति, पुराण, सूत्र-ग्रंथ ये सब वेद नहीं हैं। इन ग्रंथों में जो कुछ लिखा है वह अगर वेद-विरूद्ध है, तो वह त्याज्य है, जो वेदानुकूल है, वही ग्राह्य है। ऋषि दयानन्द का हिन्दू-समाज को कहना यह था कि अगर वेद को तुम अपनी संस्कृति का आधार मानते हो, तो इस पैमाने को लेकर चलना होगा, तुम जो चाहो वह वेद नहीं, वेद जो है वह मानना होगा। इस कसौटी पर कसने से हिन्दू-समाज की 90 प्रतिशत रूढ़ियां अपने-आप गिर जाती थीं। इस विचारधारा को प्रकट करने के लिए उन्होंने दो शब्दों का प्रयोग किया- 'आर्षग्रन्थ' तथा 'अनार्ष ग्रन्थ'। अब तक संस्कृत-साहित्य में इस दृष्टि को किसी ने नहीं अपनाया था। संस्कृत के हर ग्रन्थ में जो-कुछ लिखा मिलता था वह प्रमाणित माना जाता था। ऋषि दयानन्द ने इस विचार को ठोकर मारकर गिरा दिया।

वेदों के संबंध में ऋषि दयानन्द की दूसरी खोज यह थी कि वेदों के शब्द रूढ़ि नहीं, यौगिक हैं। यद्यपि यह विचार नया नहीं था, निरूक्तकार का यही कहना था, तो भी वेदों के सभी भाष्यकारों ने वैदिक शब्दों के रूढ़ि अर्थ ही किये थे। सायण, उव्वट, महीधर तथा उनके पीछे चलते हुए पाश्चात्य विद्वानों ने - मैक्समूलर, विल्सन, ग्रासमैन ने - मक्खी-पर-मक्खी मार अनुवाद किया था। सायण आदि एक तरफ वेदों को ईश्वरीय ज्ञान मानते थे, दूसरी तरफ उनमें इतिहास भी मानते थे जो वेदों के ईश्वरीय-ज्ञान होने के सिद्धान्त से टकराता था। इस बात की उन्हें कोई चिन्ता नहीं थी। असल में, सायण का भाष्य किसी गंभीर विद्वत्ता से नहीं किया गया था, वह एक विशिष्ट लक्ष्य को सामने रखकर किया गया था। दक्षिण के विजयनगरम हिन्दू-राज्य के राजा हरिहर और बुक्का के वे मंत्री थे। मुस्लिम संस्कृति राज्य में प्रतिष्ठित न हो जाय, इसलिए संस्कृत वाङ्मय का प्रसार करना मात्र इस भाष्य का उद्देश्य था। यही कारण है कि सायण के भाष्य गहराई तक नहीं गये और असंगत बातों के शिकार रहे। वह यज्ञों का समय था इसलिए भाष्यकार समझते थे कि वेदों के अग्नि, वायु, इन्द्र आदि देवता सचमुच स्वर्ग से यज्ञों में पधारते हैं और दान दक्षिणा आदि लेकर तथा यजमान को आशीर्वाद देकर स्वर्ग में चले जाते हैं। पश्चात्य विद्वानों को यह बात अपनी विचारधारा के अनुकूल पड़ती थी। उनका विचार विकासवाद पर आश्रित था। आदि-मानव जंगली था, जंगली आदमी सूर्य को, अग्नि को, वायु को देवता समझकर पूजे तो यह युक्तियुक्त प्रतीत होता है। पश्चात्य विद्वान कहने लगे कि वैदिक ऋषि क्योंकि जंगली थे इसलिए अनेक देवताओं को पूजते थे। इस निष्कर्ष में सायण आदि के भाष्य उनके विचार की पुष्टि करते थे।

ऋषि दयानन्द ने इस विचार को भी ठोकर मारकर गिरा दिया। वेदों से ही उन्होंने सिद्ध किया कि अग्नि आदि नाम भिन्न-भिन्न देवताओं के नहीं, एक परमेश्वर के ही ये भिन्न-भिन्न नाम हैं। ऋग्वेद (1, 164, 46) में लिखा है 'एकं सत् विप्रा बहुधा वदन्ति अग्निम् यमं मातरिश्वानमाहुः' -परमात्मा एक है, उसे अनेक नामों से स्मरण किया जाता है। इस एक मंत्र से सारा-का-सारा विकासवाद, कम-से-कम जहां तक वेदों का सम्बन्ध है, ढह जाता है।

ऋषि दयानन्द का कहना था कि वैदिक शब्दों के तीन प्रकार के अर्थ होते हैं- आधिभौतिक, आधिदैविक तथा आध्यात्मिक। उदाहरणार्थ, इंद्र का आधि-भौतिक अर्थात् अग्नि, विद्युत, सूर्य आदि है: आधिदैविक अर्थात् राजा, सेनापति, अध्यापक आदि दैवीय गुण वाले व्यक्ति है: आध्यात्मिक अर्थ जीवात्मा, परमात्मा आदि है। इसी प्रकार अन्य शब्दों के विषय में कहा जा सकता है। इस कसौटी को सामने रखकर अगर वेदों को समझा जाय, तो न उनमें इतिहास नहीं मिलता है।

वेदों के जितने भाष्यकार हुए हैं- इस देश के तथा विदेशों के- उनमें सबसे ऊंचा स्थान ऋषि दयानन्द का है। अगर वेदों को किसी ने समझा तो ऋषि दयानन्द ने। अरविन्द घोष ने लिखा है:

" In the matter of Vedic interpretation Dayanand will be honoured as the first discoverer of the right clues. Admist the chaos and obscurity of old innorance and agelong misunderstanding, his was the eye of direct vision, and piereed to the truth ad fastened on that which was essential"

इस युग के महायोगी श्री अरविन्द का कहना है कि "जहां तक वेदों का प्रश्न है दयानन्द सबसे पहला व्यक्ति था जिसने वेदों के अर्थों को समझने की असली कुंजी को खोज निकाला। वेदों का अर्थ समझने के लिए सदियों से जिस अन्धकार में हम रास्ता टटोल रहे थे, उसमें दयानन्द की दृष्टि ही इस अन्धकार को भेद कर यथार्थ सत्य पर जा पहुंची थी।"

19वीं शताब्दी में भारत में अनेक समाज-सुधारक हुए। ऋषि दयानन्द, राजा राम मोहन राय, केशवचन्द्र सेन इस युग की उपज थे। वे सब एक तरफ हिन्दू-समाज के पिछड़ेपन को देख रहे थे, दूसरी तरफ पश्चिमी देशों की प्रगतिशीलता को देख रहे थे। यह सब देखकर वे हिन्दू-समाज को रूढ़ियों की दासता से मुक्त करना चाहते थे। ऋषि दयानन्द तथा दूसरों की विचारधारा में भेद यह था कि जहां दूसरे हिन्दू-धर्म, हिन्दू संस्कृति तथा हिन्दुत्व को ही समाप्त करने पर तुल गए, वहां ऋषि दयानन्द ने हिन्दुओं के हिन्दू रहते हुए उन्हें नवीनता के नये रंग में रंग दिया। कोई वृक्ष जड़ के बिना नहीं खड़ा रह सकता। जड़ कट जाये, तो वृक्ष गिर जाता है। जड़ को मजबूत बना कर जो वृक्ष उठता है वही टिका रहता है। कोई समाज अपने अतीत के बिना नहीं जी सकता। अतीत में पैर जमाकर भविष्य की तरफ बढ़ना यही किसी समाज के जीवन का गुण है। ऋषि दयानन्द ने इसी गुण को पकड़ा था। पीछे वेदों की तरफ देखो, उसमें जमकर आगे भविष्य की तरफ पग बढ़ाओ। अतीत को छोड़ दोगे तो वृक्ष की जड़ कट जायेगी, भविष्य को नहीं देखोगे तो उठ नही सकोगे यह ऋषि दयानन्द के सत्यार्थ-प्रकाश का सन्देश है, यही ऋषि दयानन्द के वेदभाष्य का सन्देश है।

4.9.1-सत्यार्थप्रकाश-प्रथम संस्करण

इसका प्रथम संस्कारण 1875 तथा द्वितीय 1884 में प्रकाशित हुआ। ऋषि का सर्वाधिक प्रसिद्ध ग्रन्थ यही है। इसकी विस्तृत चर्चा सत्यार्थप्रकाश के दूसरे संस्करण में करेंगे। देश-विदेश की अनेक भाषाओं में भी इसका अनुवाद हो चुका है और आगे भी होता रहेगा।

4.9.2-सत्यार्थप्रकाश-द्वितीय संस्करण (संशोधित)

महर्षि दयानन्द की स्वतन्त्र रचनाओं में सत्यार्थप्रकाश सर्वोत्तम, सर्वाधिक महत्वपूर्ण और आकार में भी सबसे बड़ी है। गत 130 वर्षों में इसमे सर्वप्रथम प्रतिपादित शिक्षाओं ने

- शेष पृष्ठ 4 पर...

मानव की कर्म कुशलता ही सफलता की कुँजी है

-आचार्य भगवानदेव वेदालंकार

कर्म कुशल बनने की आवश्यकता-

इस संसार में कर्म-कुशल बनने की महती आवश्यकता है। कर्मशील व्यक्ति ही प्रत्येक क्षेत्र में सफलता प्राप्त करता है। कर्मशील का विपरीत अर्थ निष्क्रिय, निकम्मा तथा आलसी होता है। कर्मठ, कर्मशील, कर्मकुशल होना "अच्छा गुण" माना गया है। आलसी, प्रमादी, निकम्मा, निष्क्रिय, होना "बुरा" माना गया है। इसलिए मानव की कर्म कुशलता ही सफलता की कुँजी है। परमपिता परमात्मा ने वेद-ज्ञान के माध्यम से हमें कर्मशील बनने की अनेक प्रकार से प्रेरणा दी है। उदाहरण के रूप में "यजुर्वेद" कर्म करने की शिक्षा देता है-

"कुर्वन्नेवेह कर्माणि जिजीविषेच्छतँ समाः।
एवं त्वयि नान्यथेतोऽस्ति न कर्म लिप्यते नरे।।"

-यजुर्वेद अध्याय 40 - मन्त्र-2

अर्थात् (इह कर्माणि कुर्वन्न एव) इस संसार में मनुष्य को कर्म करते हुए ही (शतं समाः जिजीविषेत्) सैंकड़ों वर्षों तक जीने की इच्छा करनी चाहिए। आलसी बनकर, प्रमाद युक्त बनकर, निकम्मा बनकर जीवन नहीं जीना है। (एवं त्वयि न अन्यथा इतो अस्ति) इस प्रकार हे मानव ! कर्मशील बनने के अलावा संसार में जीवन जीने का अन्य कोई दूसरा उपाय नहीं है। (न कर्मलिप्यते नरे) 'कर्मशील व्यक्ति' सांसारिक कर्म-बन्धनों में नहीं फँसता है। वह एक दिन अपने इच्छित फलों को प्राप्त कर लेता है। कर्म-कुशलता ही सफलता की सबसे अच्छी कुँजी है।

शुभकर्म करने से कल्याण होता है:

मानव-जीवन बड़े ही पुण्य कर्म करने से प्राप्त होता है जैसे

(1) 'यज्ञ-कर्म': यह करना चाहिए, इस में ब्रह्म-ध्यान, मनन, चिन्तन करने से कल्याण होता है।

(2) 'देव यज्ञ': इस में हवन, अग्निहोत्र करने से वातावरण, अर्थात् पर्यावरण शुद्ध होता है। अच्छा स्वास्थ्य बनता है। सभी दिव्य शक्तियाँ सन्तुष्ट रहती हैं। जीवन-शुद्ध-पवित्र बनता है।

(3) पितृ-यज्ञः इस में माता, पिता तथा बुजुर्गों की सेवा करना, आज्ञा पालन करने से आशीर्वाद फलीभूत होता है।

(4) अतिथियज्ञः इस में अचानक घर पर कोई विद्वान् आचार्य, संन्यासी, धर्मात्मा-जन, आदरणीय व्यक्ति यदि आ जाये, तो उनका उचित ढंग से भोजन, फल, पानी, शयन एवं वस्त्रादि से स्वागत करना कल्याणकारी कर्म है।

(5) परोपकार कर्म : इस में दूसरों का, जरूरतमन्दों का हित करना, सहयोग करना, मदद देना।

(6) दान-कर्म : इस में अपनी पवित्र कमाई के धन को गरीबों की सेवा में लगाना, विद्या-वृद्धि में सहयोग देना, भूखों को भोजन, वस्त्रहीनों को वस्त्र देना, परोपकारी, सेवा-भावी संस्थाओं को बढ़ावा, विद्वानों की सेवा करने से मनुष्य का कल्याण होता है।

(7) स्वाध्याय-कर्मः में ऋषि-महर्षियों के ग्रन्थों, वेदों, शास्त्रों, उपनिषदों आदि को पढ़कर ज्ञान प्राप्त करना चाहिए। आत्म-चिन्तन करना चाहिए।

(8) सत्संग कर्म : में विद्वानों, आचार्यों, ज्ञानी-पुरुषों से उत्तम शिक्षा-दीक्षा ग्रहण करनी चाहिए। अपने दोषों का निवारण, सद्गुणों, संस्कारों की प्राप्ति करना चाहिए। सन्त तुलसी दास जी के शब्दों में "बिन सत्संग विवेक न होई, प्रभु कृपा बिन सुलभ न कोई"

इस प्रकार के श्रेष्ठ कर्म करने से ही मानव का परम कल्याण होता है। इसलिए मनुष्य को कर्म-कुशल होना चाहिए। संसार में व्यक्ति को अपने उत्तम व्यवहार से, शुभ-कर्मों से अपनी अच्छी पहचान बनानी चाहिए।

शुभ कर्मों से स्वर्ग की प्राप्ति :

संसार में शुभ कर्मों से ही व्यक्ति को विशेष सुख की तथा शान्ति की अनुभूति होती है। अंहिसा का पालन करना, सत्याचरण, सदाचार का पालन, चोरी न करना, बिना पूछे किसी की वस्तु प्रयोग न करना, ब्रह्मचर्य का पालन करना, मन, वचन, शरीर को पवित्र रखना, सन्तोष से काम लेना, तपस्वी जीवन व्यतीत करना, कष्टों से न घबराना, ईश्वर के प्रति समर्पित भाव से कार्य करना, जीवन में धीरज से काम लेना, मन और इन्द्रियों पर काबू रखना, विद्या-पढ़ना, ज्ञान प्राप्त करना, जैसे शुभ कर्म मनुष्य को स्वर्ग की ओर ले जाते हैं।

अशुभ कर्मों से नरक की प्राप्ति :

संसार में कुछ कर्म ऐसे हैं जो अशुभ कर्म हैं। निषिद्ध कर्म हैं। जैसे-हिंसा करना, निरापराध प्राणियों को मारकर खाना, गौ-हत्या करना, पशु-पक्षियों का माँस-भक्षण करना, अण्डे खाना, असत्याचरण करना, छल-कपट का सहारा लेना, चोरी करना, बिना पूछे किसी की वस्तु लेना, दुराचरण, चरित्र-हीनता, दुर्व्यवहार करना, आवश्यकता से अधिक वस्तुओं का संग्रह करते रहना, भ्रष्टाचार से धन इकट्ठा करना, मलीनता से रहना, गन्दे विचार, गन्दी सोच रखना, असन्तोष धारण करना, लालच में पड़कर कार्य करना, आलस्य-प्रमाद में पड़कर समय पर कार्य न करना, दूसरों के भरोसे रहना, मूर्खता में पड़े रहना, कुसंग में पड़े रहना, ज्ञान-प्राप्त न करना, नास्तिकता से ग्रसित होना, ईश्वर, वेद, स्वाध्याय सत्संग के लिए प्रयास न करना, जल्दी बाजी में कार्य करना, धीरज से कार्य न करना, लम्पट होना, मन और इन्द्रियों पर काबू न करना, क्रोध करना इत्यादि अशुभ कर्मों के सेवन से व्यक्ति नरक-गामी बनता है। दुःखी और अशान्त रहता है। ऐसे निषिद्ध कर्मों से मनुष्य को बचना चाहिए। ये अशुभ कर्म त्याज्य हैं। इनका त्याग करने से मनुष्य सुख, शान्ति और खुशियाँ प्राप्त कर लेता है।

जीव की कर्म करने में क्या स्थिति है?

हमारे ऋषियों, वेद-शास्त्रों का यह कहना है कि जीव कर्म करने में स्वतन्त्र है। जीव यदि स्वतन्त्र न होता, तो पुण्य भी न करता और सुख भी न मिलता। महर्षि स्वामी दयानन्द जी महाराज ने अपने अमर ग्रन्थ सत्यार्थ प्रकाश में लिखा है-

प्रश्न-जीव स्वतन्त्र है वा परतन्त्र?

उत्तर - जीव अपने कर्त्तव्य कर्मों में स्वतन्त्र है और ईश्वर की न्याय व्यवस्था के अनुसार फल भोगने में परतन्त्र है। "स्वतन्त्रःकर्त्ता" ऐसा पाणिनीय व्याकरण के-सूत्र का प्रमाण भी है। आगे फिर प्रश्न किया गया है।

प्रश्न-स्वतन्त्रता किसको कहते हैं?

उत्तर - "जिसके आधीन शरीर, प्राण, इन्द्रिया और अन्तकरणादि हों। जो स्वतन्त्र न हो तो उसके कर्मों का फल पाप व पुण्य कभी पाप्त नहीं हो सकता क्योंकि जैसे भृत्य, स्वामी और सेना, सेनाध्यक्ष की आज्ञा अथवा प्रेरणा से युद्ध में अनेक पुरुषों को मारकर अपराधी नहीं होते, वैसे ही परमेश्वर की प्रेरणा आधीनता से काम सिद्ध हों तो जीव को पाप व पुण्य न लगे। उस फल का भागी प्रेरक परमेश्वर होवे। स्वर्ग-नकर अर्थात् सुख-दुःख की प्राप्ति भी परमेश्वर को होवे। जैसे किसी मनुष्य ने शस्त्र विशेष से किसी को मार डाला तो वही मारने वाला पकड़ा जाता है और वही दण्ड पाता है, शस्त्र नहीं। वैसे ही पराधीन जीव पाप-पुण्य का भागी नहीं हो सकता। इसलिये अपने सामर्थ्य अनुकूल कर्म करने में जीव स्वतन्त्र परन्तु जब वह पाप कर चुकता है तब ईश्वर की व्यवस्था में पराधीन होकर पाप के फल भोगता है। इसलिये कर्म करने में जीव स्वतन्त्र और पाप के दुःखरूप फल भोगने में परतन्त्र होता है।" पुनः आगे प्रश्न फिर किया गया है कि-

प्रश्न- जो परमेश्वर जीव को न बनाता और सामर्थ्य न देता तो जीव कुछ भी न कर सकता। इसलिए परमेश्वर की प्रेरणा से ही जीव कर्म करता है?

उत्तर - "जीव उत्पन्न कभी न हुआ, अनादि है। जीव का शरीर तथा इन्द्रियों के गोलक परमेश्वर के बनाये हुए हैं परन्तु वे सब जीव के अधीन हैं। जो कोई मन, कर्म, वचन से पाप-पुण्य करता है वही भोक्ता है ईश्वर नहीं।

जैसे किसी कारीगर ने पहाड़ से लोहा निकाला, उस लोहे को किसी व्यापारी ने लिया, उसकी दुकान से लोहार ने ले तलवार बनाई, उससे किसी सिपाही ने तलवार ले ली फिर उससे किसी को मार डाला। अब जैसे यहाँ वह लोहे को उत्पन्न करने, उससे लेने, तलवार बनाने वाले और तलवार को पकड़कर राजा दण्ड नहीं देता किन्तु जिसने तलवार से मारा, वही दण्ड पाता है।

इसी प्रकार शरीरादि की उत्पत्ति करने वाला परमेश्वर उसके कर्मों का भोक्ता नहीं होता, किन्तु जीव को भुगाने वाला होता है। जो परमेश्वर कर्म कराता होता तो कोई जीव पाप नहीं करता क्योंकि परमेश्वर पवित्र और धार्मिक होने से किसी जीव को पाप करने की प्रेरणा नहीं करता। इसलिए जीव अपने काम करने में स्वतन्त्र है।" -सत्यार्थ प्रकाश सप्तम समुल्लास

गीता में भी कर्म-कुशल बनने की प्रेरणा दी गई है-

कर्मण्येवाधिकारस्ते मा फलेषु कदाचन। मा कर्म-फल हेतु र्भूमा ते सङ्गोऽस्त्वकर्मणि।। अ.2/47

अर्थात् मनुष्य का अधिकार कर्म करने में ही होना चाहिए, हमने जो कर्म किया है, उसका फल तो हमें मिलना ही है, फिर फल की चिन्ता नहीं करनी चाहिए। ऐसा भी न होना चाहिए कि मनुष्य की कर्म में प्रीति ही न रहे। निकम्मा, निष्क्रियपन ठीक नहीं।

गीता में कर्मठता को, कर्म कुशलता को सबसे अच्छा योग बतलाया गया है।

"योगः कर्मसु कौशलम्"

गीता अ.2-श्लोक 50

व्यक्ति को योग करने के लिए भी कर्मशील बनना पड़ेगा। तभी सफलता मिलेगी।

सन्त तुलसी दास जी ने भी कर्म की प्रधानता को प्रमुख माना है

कर्म प्रधान विश्व रचि राखा।
जो जस करे तो तस फल चाखा।।

आपको अधिकार है कि आप आम का बीज बोयें या मिर्च का बीज। यदि आपने आम का बीज बोया है तो फल के रूप में अच्छा फल या परिणाम ही सामने आयेगा और यदि मिर्ची का बीज बोया है तो अच्छे फल की आशा करना व्यर्थ है। कर्त्तव्य का न करना भी अशुभ है और उलटा करना, पाप रूप करना भी अशुभ।

नीतिशास्त्रों में कर्मशील, उद्योगी एवं परिश्रमी मानव की मुक्त कण्ठ से प्रशंसा की गई है-

उद्योगिनं पुरुष सिंहमुपैति लक्ष्मी,
दैवेन देयमिति का पुरुषा वदन्ति।
दैवं निहत्य कुरु पौरुषमात्मशक्त्या
यत्ने कृते यदि न सिद्धयति कोऽत्र दोषः।। -पञ्चतन्त्र 2-12

अर्थात् इस संसार में सिंह के समान बहादुर उद्योगी कर्मशील व्यक्ति को ही लक्ष्मी रूप धन-सम्पत्ति तथा ऐश्वर्य प्राप्त होता है। भाग्य के भरोसे बैठकर, कामना पूरी हो जाय, बड़ा कठिन है। कायर पुरुष भाग्य के भरोसे बैठे रहते हैं, लेकिन बहादुर व्यक्ति भाग्य को छोड़कर अपनी सामर्थ्यानुसार पुरुषार्थ रूपी कर्म करते हैं। अपने दोषों को सुधारते हैं। अपने परिश्रम को तब तक करते हैं, जब तक कार्य सिद्ध न हो जाय। किसी कवि की ये पंक्तियाँ हमारे लिए अत्यन्त प्रेरणा प्रद हैं-

"जब तक न पूरा कार्य हो,
उत्साह से करते रहो।
पीछे न हटिये एक तिल
आगे सदा बढ़ते रहो।
बाधायें कब बान्ध सकी हैं,
आगे बढ़ने वालों को।
विपदायें कब रोक सकीं हैं,
मरकर जीने वालों को।।"
देखकर बाधा विविध,
बहु विघ्न घबराते नहीं।
रह भरोसे भाग्य के,
दुःख भोग पछताते नहीं।।

-अयोध्या सिंह उपाध्याय

उपरोक्त सन्दर्भों से यह सिद्ध होता है कि मनुष्य को यथा सामर्थ्य कर्मशील होना चाहिए। कर्म कुशलता

- शेष पृष्ठ 2 का...

केवल भारत में ही नहीं, अपितु भारत से बाहर के भी अनेक देशों में बसे भारतवासियों के माध्यम से न केवल धार्मिक, अपितु सामाजिक, राजनीतिक, आर्थिक, शैक्षिक, साहित्यिक, सांस्कृतिक और दार्शनिक आदि सभी क्षेत्रों में अपना चमत्कारिक प्रभाव डाला है और प्रत्यक्ष या परोक्ष रूप में विश्व के अनेक श्रेष्ठ चिन्तकों को प्रभावित किया है। अपितु भारत की लगभग सभी प्रमुख भाषाओं के अतिरिक्त अंग्रेजी, जर्मन, फ्रैंच, चीनी और अफ्रीकी आदि कई भाषाओं में भी इसके अनुवाद हुए हैं। मॉरीशस, सूरीनाम और फीजी आदि देशों में आज जो भारतवंशी वहां के प्रधानमंत्री पद तक पहुंचने में सफल हुए हैं, उनके पूर्वजों को सामाजिक और राजनीतिक आदि क्षेत्रों में सक्रिय होने की प्रेरणा वहां-वहां सत्यार्थप्रकाश की शिक्षाओं के प्रचार-प्रसार से ही मिली थी, अन्यथा पहले ही उनके बड़ी संख्या में ईसाई बन जाने से भारत के साथ उनके भावनात्मक सम्बन्ध भी कभी के टूट चुके होते।

सत्यार्थप्रकाश की रचना महर्षि दयानन्द ने 1874 में की थी और उसका प्रथम संस्करण 1874 में निकला था। इस क्रान्ति का मूल-स्रोत उनका ग्रन्थ सत्यार्थ-प्रकाश है। मुरादाबाद के राजा जयकृष्णदास जब काशी में डिप्टी कलेक्टर थे तब ऋषि दयानन्द काशी पधारे। राजा जय कृष्ण दास ने ऋषि से कहा 'आपके उपदेशामृत से वे ही व्यक्ति लाभ उठा सकते हैं जो आपके व्याख्यान सुनते है। जिन्हें आपके व्याख्यान सुनने का अवसर नहीं मिलता उनके हेतु अगर आप अपने विचारों का ग्रंथ रूप में लिख दें, तो जनता का बड़ा उपकार हो। ग्रन्थ के छापने का भार राजा जय कृष्ण दास ने अपने ऊपर ले लिया। यह आश्चर्य की बात है कि यह बृहत्काय तथा महत्वपूर्ण ग्रंथ जिसे पण्डित गुरूदत्त-विद्यार्थी ने 14 बार बढ़कर कहा कि हर बार के अध्ययन से उन्हें नया रत्न हाथ आता था, कुल साढ़े तीन महीनों में लिखा गया। क्योंकि ऋषि दयानन्द ने उसका लेखन स्वयं अपने हाथ से न कर अपने भक्त मुरादाबाद के राजा जयकृष्णदास द्वारा लेखन-कार्य के लिए नियुक्त लेखक से मौखिक बोल-बोल कर करवाया था, उसमें कुछ विचार महर्षि दयानन्द की मान्यताओं के विपरीत छप गये थे और समुल्लास 13-14 छप नहीं सके थे। समयानुसार पाठकों ने जब ऋषि को ध्यान अशुद्धियों की ओर दिलाया, तो उन्होंने एक सार्वजनिक विज्ञापन निकालकर इन अशुद्धियों से जनता का अवगत करवा दिया। उन्होंने वर्तमान द्वितीय संस्करण को महाराजा उदयपुर के नवलखा महल में उसकी भूमिका लिखकर पूर्ण किया, परन्तु वह संस्करण उनके जीवनकाल में पूरा न छप सकने के कारण उनके देहावसान के कुछ मास बाद ही प्रकाशित हो सका, जिससे आर्यसमाज के विरोधियों, विशेषकर सनातनधर्मी पंडित कालूराम और ईसाई-मुसलमान को यह कहने का अवसर मिला कि आर्यसमाजियों ने अपनी ओर से बहुत सी बातें बदलकर और घटा-बढ़ाकर यह दूसरा नकली संस्करण छाप दिया है पं. कालूराम ने तो प्रथम संस्करण छपवाकर ही खूब महंगें मूल्य पर बेचा, जिससे उसे तो काफी आर्थिक लाभ हुआ ही, साथ ही आर्यसमाज को यह भारी लाभ हो गया, कि बहुत से लोग जिन्होंने द्वेषभाव के वशीभूत होकर वही सत्यार्थप्रकाश खरीदकर पढ़ा, उसके उच्च सिद्धान्तों और विचारों से प्रभावित होकर ही आर्यसमाजी बन गये।

सत्यार्थप्रकाश ने धार्मिक क्षेत्र में इस्लाम और ईसाईयत समेत सभी मजहबों को अपने-अपने अंधविश्वास और रूढ़ियां छोड़ने, अपनी धार्मिक मान्यताओं और मान्य ग्रन्थों के पाठ और अनुवाद बदलने तथा अपने मजहबों को मानवतावादी उदार रूप देने, सामाजिक क्षेत्र में हिन्दू समाज का दलितों, पिछड़ों, समाज द्वारा उपेक्षितों, अनाथों, महिलाओं और हिन्दू समाज से बहिष्कृत या विधर्मी बने लोगों के प्रति बन्द अपने मन-मस्तिष्क के द्वारा खोलने, राजनीतिक क्षेत्र में पराधीन भारतीयों और शासक अंग्रेजों तथा उनके क्रीत भारतीय चमचों को अपनी निद्रा, त्यागने, आर्थिक क्षेत्र में भारतीय चमचों की कृषि, गोरक्षा, उद्योग और

छोटे समझे जाने वाले अनेक व्यवसायों को खुले मन से अपनाने, शैक्षिक क्षेत्र में समाज से सभी वर्गों के लिए स्कूल कॉलेज गुरुकुल खोलने दार्शनिक क्षेत्र में अपनी मान्यताओं में ऊहापोह करने, साहित्यक क्षेत्र में कवियों को केवल धार्मिक, पलायनवदी और श्रृंगारपरक रचनाओं के स्थान पर समाजोन्मुखी साहित्य रचने और सांस्कृतिक क्षेत्र में हिन्दू समाज को यूरोपीय धर्म और संस्कृति को चकाचौंथ से अप्रभावित रहकर प्राचीन भारत के अपने आदिकालीन इतिहास भाषा और साहित्य की खोज करने और उसके महत्व को स्वयं हृदयंगम कर विदेशों तक में भी प्रचारित करने पर विवश कर दिया। इन आन्दोलनों में बाद में चाहे और भी कितने ही व्यक्ति ओर संस्थाएं क्यों न जुड़े हों, पर उनकी मूल प्रेरणा सत्यार्थ प्रकाश की शिक्षाएं और उनसे उपजे महनीय व्यक्तित्व, संस्थाएँ तथा आन्दोलन ही थे–इसमें कोई सन्देह नहीं है।

सत्यार्थप्रकाश में कुल 20 खण्ड हैं– प्रथम भूमिका, फिर पूर्वार्द्ध के 10 समुल्लास, जो वैदिक धर्म और संस्कृति के जाज्वल्यमान स्वरूप का दिग्दर्शन कराते हैं, फिर उत्तरार्ध के 11 से 14 तक 4 समुल्लास, जिनमें प्रत्येक के साथ पहले 1–1 अनुभूमिका भी जुड़ी है और जो भारत के और विदेशी–सभी अवैदिक सम्प्रदायों की बुद्धि विरूद्ध और मानवता–विरोधी मान्ताओं का प्रत्याख्यान करते हैं और फिर सबसे अन्त में है– स्वमन्तव्यामन्तव्य प्रकाश, जो एक प्रकार से वैश्विक धर्म और सत्यार्थप्रकाश में भी प्रतिपादित विषयों का खरा–खोटापन पहचानने की कसौटी है।

अन्धकार से प्रकाश की प्राप्ति हेतु सत्यार्थप्रकाश पढ़ें–

धर्म के रहस्य स्वरूप तथा सभी मत–सम्प्रदाय व उनके ग्रन्थों को जानना के लिए सत्यार्थप्रकाश पढ़े।

यथार्थ दर्शन ज्ञानमिति – अर्थात् जो वस्तु जैसी है, उसको वैसा ही जानता ज्ञान कहलाता है, ज्ञान शब्द बहुत व्यापक है कुछ लोग केवल ब्रह्मज्ञान को ही केवल ज्ञान समझते हैं, जब कि ऐसा नहीं है। संसार की किसी भी वस्तु के वास्तविक स्वरूप को जानना ही ज्ञान कहलाता है। प्रकृति के स्वरूप को जानना ज्ञान है, जीव के स्वरूप को जानना ज्ञान है, और ब्रह्म को जानना ज्ञान है। ब्रह्मज्ञान (तत्त्वज्ञान) से ही मनुष्य आवागमण से मुक्त होता है। इसलिए ब्रह्म को जानना ही मानव जीवन का प्रमुख लक्ष्य है। परमात्मा का साक्षात्कार योगाभ्यास (यम, नियम, आसन, प्राणायाम, प्रत्याहार, धारणा, ध्यान और समाधि) से होता है। बिना योगाभ्यास के मन की वृत्तियां शांत नहीं होतीं और न मन एकाग्र होता है। अतः मन को एकाग्र करने के लिए आठ अंगों सहित योग का अभ्यास किया जाता है। योगाभ्यास सीखने के लिए हमें गुरु की आवश्यकता होती है बिना गुरू के ज्ञान नहीं। अतः ऐसा गुरु चाहिए जो सांसारिक सुख सुविधाओं को तुच्छ समझता हो और परमात्मा सुख में ही निमग्न हो। जैसे कार से चलने वाला व्यक्ति साइकिल की अपेक्षा नहीं रखता उसी तरह से ब्रह्म ज्ञानी भौतिक सुख सुविधाओं को अति हेय दृष्टि से देखता है तो हमें ज्ञान प्राप्त करने से पहले योग्य गुरु की खोज करनी पड़ेगी। अर्थात् हमारे पास इतना ज्ञान होना चाहिए कि हम सच्चे गुरु और झूठे गुरु की पहचान कर सकें। नहीं तो इस ज्ञान के अभाव में धुर्त, लम्पट, पाखण्डी और योग के व्यापारियों को ही गुरु मान लेंगे। जैसा कि हम देख रहें हैं कि लोग अज्ञानवश पाखण्डी–धूर्तो को अपना गुरु और भगवान मान रहे हैं। ऐसी स्थिति में हम क्या करें? अधर्म और ठगों से बचने का तथा धर्म और सदगुरु को प्राप्त करने का उपाय (ज्ञान) कैसे प्राप्त करें? इस अवस्था में हमारा मार्ग दर्शन "सत्यार्थप्रकाश" करता है। यदि हमें अन्धकार से प्रकाश की ओर जाना है, धर्म के सत्य स्वरूप को समझना है और सभी मत–मतांतर व उनके ग्रन्थों को जानना है तो महर्षि दयानन्द सरस्वती द्वारा लिखा विश्व प्रसिद्ध ग्रन्थ "सत्यार्थप्रकाश" पढ़ना चाहिए। सत्यार्थप्रकाश ऐसे समय में लिखा गया जब भारत दास्ता और अंधविश्वास से जकड़ा हुआ था। तथा कथित धर्माचार्य जनता को मूर्ख बनाकर लूट रहे थे। दलितों और स्त्रियों को कोई अधिकार नहीं था। वेद की शिक्षाएं लुप्त हो गई थीं। ऐसे समय में महर्षि दयानन्द ने अपने योग बल और विद्या बल से वेदादि सभी शास्त्रों का गहन अध्ययन करके यह निष्कर्ष निकाला कि वैदिक धर्म ही वास्तविक "मानवधर्म" है। वेद की शिक्षाएं पूर्णतः तर्क युक्त, बुद्धि–गम्य और विज्ञान समस्त हैं। इस निष्कर्ष पर पहुंचकर महर्षि दयानन्द मानव कल्याण के लिए, सत्य सनातन धर्म के सत्य स्वरूप को जनता के सम्मुख रखने के लिए और पाखण्ड को नष्ट करने के लिए अपना विश्वप्रसिद्ध धर्म ग्रन्थ " सत्यार्थप्रकाश" लिखा। सत्यार्थप्रकाश एक ऐसा ग्रन्थ है जिसके पढ़ने से सैकड़ों ग्रन्थों का अध्ययन हो जाता है। मानव के मन में उठने वाली सभी शंकाओं का उत्तर हमें "सत्यार्थप्रकाश" में प्राप्त होता है।

इस पुस्तक को पढ़ने वाला कभी किसी धूर्त, पाखण्डी गुरु के बहकावे में नहीं आ सकता। पाखण्डी लोग कैसे जनता को ठगते हैं इसका वर्णन इस पुस्तक में विशेष किया गया है। आप भी इस महान् पुस्तक को अवश्य पढ़ें।

सत्यार्थप्रकाश में वर्णित अद्भूत रहस्य–

"सत्य और असत्य" का निर्माण करने कराने तथा मानव जीवन में अमूल्य शिक्षाओं को ग्रहण करने वैचारिक प्रदूषण मिटाने, धार्मिक, राजनीतिक, सामाजिक और राष्ट्रीय चेतना के लिए तीन हजार ग्रन्थों का सरल भाषा में सार जानने के लिए विश्व प्रसिद्ध अमर ग्रन्थ 'सत्यार्थप्रकाश' को अवश्य पढ़ें।

भूमिका –

"सत्यार्थप्रकाश" वेदों और वेदानुकूल ऋषिकृत ग्रन्थ मनुस्मृति, ब्राह्मण ग्रन्थ, उपनिषद्, सांख्यादि षड्दर्शन, रामायण, गीता, महाभारतादि सम्पूर्ण वैदिक ग्रन्थों का सार है। इस महान् ग्रन्थ को लिखने का मुख्य उद्देश्य–जो तीन कालों में सत्य है उसको सत्य और जो असत्य है उसको असत्य बतलाना है।

सर्वप्रथम भूमिका में ऋषि दयानन्द ने प्रथम संस्करण में छपी भूलों और भाषा के अभ्यास की कमी का उल्लेख करते हुए स्पष्ट किया है कि सत्यार्थप्रकाश के लिखने में उनका उद्देश्य किसी नये मत की स्थापना करना नहीं है या किसी का दिल दुखाना नहीं है बल्कि परस्पर विचार–विनियम से सस्यासत्य का निर्णय कर एकता का सम्पादन करना है। यदि इसमें कहीं भुलचूक रह गई हो, तो ध्यान में लाने पर उसका शोधन कर दिया जाएगा। ध्यान रहे कि इस शोधन का अधिकार केवल लेखक को था, न कि सबको। हमें कोई बात ठीक न जंचती हो, तो उसे न मानने का अधिकार तो हमें है पर सत्यार्थप्रकाश के पाठ बदल देने का नहीं है, केवल मुद्रण की भूल का छोड़कर।

पहला समुल्लास –

इसमें ईश्वर के भिन्न–भिन्न नामों को लेकर मानव जाति में उत्पन्न हुई भ्रान्तियाँ और झगड़े जो दुःख का कारण बने हुए हैं, उनके निवारण के लिए ईश्वर के अनेक नामों की व्याख्या करके ऋषि दयानन्द सरस्वती ने यह सिद्ध किया है कि ईश्वर एक है जिसका निज नाम 'ओ३म्' है और जिसे गुण, कर्म स्वभाव के अनुसार विद्वान् लोग अनेक नामों से पुकारते हैं। यथा–एकं सद्विप्रा बहुधा वदन्ति अग्नि यमं मातरिश्वानमाहुः।

दूसरा समुल्लास –

इसमें माता–पिता अपनी सुसन्तान की प्राप्ति के लिए गर्भाधान से पूर्व, गर्भाधान के पश्चात् और सन्तानोत्पत्ति के पश्चात् भी किन–किन कर्तव्यों का पालन करें। यह शिक्षा विज्ञान बतलाया गया है। "माता निर्माता भवति" अर्थात माता ही प्रथम आचार्या होती है और "मातृमान् पितृमानाचार्यवान् पुरूषो वेद" लिखकर के अटूट श्रद्धा के भावों को जागृत किया है। यही दूसरे समुल्लास का मर्म है।

तीसरा समुल्लास –

इसमें अध्ययन–अध्यापन विधि, सत्य और असत्य ग्रन्थ–रत्नों के नाम, ब्रह्मचर्य पालन का गुप्त रहस्य और इसका महत्व, यज्ञ–विज्ञान, गुरू–शिष्य का परस्पर व्यवहार कैसा हो? राजा और दरिद्र की सन्तान को समान शिक्षा और सम्मान बराबर प्राप्त हो, सभी प्राणी उस एक ईश्वर की सन्तान हैं, सभी शरीरों में आत्मा का निवास है और सभी में वही परमात्मा अर्न्तयामी रूप से विद्यमान है यही ऋषि के तीसरे समुल्लास का निर्देश है।

चौथा समुल्लास –

इसमें विवाह करने वाले

युवक–युवती की योग्यता, गुण, कर्म, स्वभाव समान होने पर विवाह करवाना, विवाह के पश्चात् भी ब्रह्मचर्य का पालन कैसे करें, उत्तम सन्तान का निर्माण, अपनी इच्छानुसार पुत्र–पुत्री उत्पन्न करना, वर्णधर्म के रहस्य, पंचमहायज्ञ–विज्ञान और उसकी हर शंका का समाधान मनोहारी तथा सुबोध भाषा में किया गया है।

पाँचवा समुल्लास –

इसमें वानप्रस्थ और सन्यास की विधि का निदेश किया है गृहस्थ आश्रम के कर्त्तव्य विद्वानों के सत्यसंग का प्रयोजन, ईश्वर की भक्ति कैसे करें? मन, इन्द्रियों को सन्मार्ग पर चलाने की विधि, यथाशक्ति यथासामर्थ्य से संसार का उपकार सभी कैसे कर सकते है? यह विधि बताई गई है।

छठा समुल्लास –

इसमें राजधर्म क्या है? राजा बनने का अधिकारी कौन है? राजा का निर्वाचन कौन कर सकता है? सभाओं के लक्षण तथा किस राज्य की व्यवस्था कैसी होनी चाहिये? विद्वान् और धर्मात्माओं से राजा को कैसे व्यवहार करना चाहिए? प्रजा से 'कर' लेने की विधि के साथ प्रजा पालन का विधान स्पष्ट किया गया है।

सातवां समुल्लास –

इसमें ईश्वर के वर्णन के साथ ईश्वर का सच्चा स्वरूप दर्शाया गया है, ईश्वर भक्ति के अनन्य लाभ तथा भक्ति न करने से होने वाले अनर्थ, वेदों को पढ़ने का अधिकारी कौन? वेद ईश्वर प्रणीत है या नहीं? यदि है तो शूद्र और स्त्री को वेद पढ़ने अथवा सुनने का अधिकार क्यों नहीं? यदि है तो प्रमाण? इन सम्पूर्ण प्रश्नों का उत्तर मधुर भाव से ऋषि दयानन्द ने समझाया है।

आठवाँ समुल्लास –

इसमें अल्पविद्वानों के मस्तिष्कों में उलझने वाली भ्रान्तियाँ अर्थात् बीज पहले या वृक्ष, अण्डा पहले या मुर्गी ऐसी–ऐसी ही नहीं अपितु सुष्टि की उत्पत्ति–स्थिति और प्रलय का वर्णन, वेद के विषय में ईश्वर प्रणीत होने न होने की भ्रान्ति का निवारण, विश्व–मानव कल्याण के लिए गूढ़ रहस्यों का उद्घाटन किया है तथा सृष्टि विज्ञान से सम्बंधित सम्पूर्ण भ्रान्तियों का निराकरण किया है। विशेष रूप से 'आदि सृष्टि' के विषय में।

नौवाँ समुल्लास –

इसमें सत्यविद्या और उसके विपरीत अज्ञान, बन्धन और मोक्ष की व्याख्या, दुःखों से विमुक्ति पाकर सुखों की प्राप्ति कैसे की जा सकती है तथा किन कर्मों को करने से मनुष्यों को पशु–पक्षी, कीट आदि की योनियाँ भोग के निमित प्राप्त होती हैं और साथ–साथ मनुष्यों को योगी बनने के उपायों को प्रकाशित किया है।

दसवें समुल्लास–

इसमें मानव कल्याण की कुञ्जी, आचार–व्यवहार, भक्ष्य–अभक्ष्य का वर्णन तथा इसके विशेष रहस्यों की सुबोध व्याख्या की गई है। 'यथा अन्नं तथा मनः'

दशम समुल्लास तक ऋषि ने वैदिक धर्म और संस्कृति का वह उत्कृष्ट रूप, विश्व के सम्मुख प्रस्तुत करने के पश्चात् यह आवश्यक समझा कि भारत के पतन और विश्व में फैली अशान्ति के कारणभूत दिग्दर्शन करवाया जाये, ताकि लोग उन दोषों को त्याग दें।

ग्यारहवां समुल्लास–

इसमें आर्यावर्त भारत देश जो सोने की चिड़िया कहलाता था एवं सम्पूर्ण विश्व में विश्वगुरु पद पर प्रतिष्ठित था तथा जिस देश में लोग ज्ञान अर्जित करने के लिए आते थे तथा ज्ञान पाकर आनन्दित होते थे। ऐसे महान् आर्यावर्त देश में मूर्तिपूजा, मिथ्याज्ञान, पाखण्ड (ईश्वरोपासना के स्थान पर) जड़ प्रकृति की उपासना कर–कराके मानसिक, शारीरिक तथा आत्मिक प्रगति से विमुख हो घोर निराशा और पतन के गहरे गर्त्त में जा गिरे तथा विविध मत–मतानतरों एवं साम्प्रदायिक भ्रान्तियों में रहने वालों को, सत्य सनातन वेदज्ञान को ग्रहण करने की प्रेरणा दी है।

बारहवां समुल्लास –

इसमें जैन, बौद्ध और चार्वाक मतों की भ्रान्तियों का खण्डन, ईश्वर और सत्यज्ञान को भुलाने पर होने वाले अनर्थ का वर्णन करके मानव जाति को सावधान किया है। जैनियों ने सर्वव्यापक ईश्वर को न मानकर शरीरधारी मनुष्य को ही सर्वव्यापक स्वीकार किया है। सूर्य, चन्द्रमा और पृथ्वी आदि ग्रहों का निमित्त कारण परमेश्वर को नहीं मानते हैं। ऐसे असत्य निराधार और निष्प्रयोजन, मिथ्या ज्ञान में फँसकर परमात्मा के दिए हुए वेदज्ञान परदोषारोपण करने वाले पाखण्डियों का खण्डन करके अज्ञान के आवरण को दूर करते हुए उनका मार्ग प्रशस्त किया है।

तेरहवां समुल्लास –

इसमें आर्यों (भारतीयों) के ऊपर मंडराते ईसाईयों के मुख्य मत ग्रन्थ "बाइबिल" में लिखी गई मिथ्या कल्पनाओं का स्पष्ट रूप से खण्डन किया है अर्थात् "किये हुए पापों की क्षमा" को पाप वृद्धि का मुख्य कारण ऋषि ने बताया, पशु बलि को ईश्वर को अर्पित करना तथा पृथ्वी को चपटी मानना इत्यादि बात इसाईयों के मत ग्रन्थ "बाईबिल" में पाई जाती हैं। इन सभी अवैज्ञानिक भ्रान्तियों को युक्ति प्रमाणों से निराधार सिद्ध करके वैज्ञानिक तथ्य को प्रस्तुत किया है।

चौदहवां समुल्लास –

इसमें मुसलमानों के मत ग्रन्थ "कुरान" में अमानुष–अकृत्य कार्यों की प्रेरणा दी गई है। प्राणी हत्या करने से और हिन्दुओं की समाप्ति करने पर ही मुसलमानों के ईश्वर "अल्लाह रसूल" तृप्त होता है अर्थात् प्रसन्न होता है और तौबा करने मात्र से ही मुसलमानों को सब पापों से छुटकारा मिलता है इस अन्याय का घोर खण्डन तर्क बुद्धि से किया है।

अन्य में ऋषि दयानन्द ने सत्यासत्य जानने की प्रमाणिक कसौटी के रूप में धर्म, ईश्वर आदि 51 मौलिक तत्वों की परिभाषाओं से युक्त, स्वमन्तव्यामन्तव्य प्रकाश की रचना के साथ सत्यार्थप्रकाश की समाप्ति की है।

यदि किसी धर्म–बन्धु को वेद–विज्ञान में शंका हो, ज्ञान–विज्ञान को प्राप्त करना चाहे, विद्या–अविद्या का स्वरूप देखना चाहे! दुःखों से छूट कर सुख की प्राप्ति करना चाहे! योग का रहस्य जानना चाहे, वर्तमान जीवन में अविद्या, अस्मिता, राग, द्वेष अभिनिवेश आदि पंच–कलेशों को नष्ट करके विद्या की वृद्धि करना चाहे तो उनके लिए विश्व प्रसिद्ध अमर ग्रन्थ "सत्यार्थप्रकाश" ही सच्चा मार्ग दर्शक है!!

एक धर्म, एक भाषा और एक लक्ष्य बनाये बिना भारत का पूर्ण हित और जातीय उन्नति का होना दुष्कर है सब उन्नति का केन्द्र स्थान ऐक्य है। जहाँ भाषा भाव और भावना में एकता आ जाय, वहाँ सागर में नदियों की भाँति सारे सुख एक–एक करके प्रवेश करने लगते हैं।

एक तो मेरा धार्मिक लक्ष्य सार्वजनिक है। उस संकुचित नहीं किया जा सकता। दूसरे भारतवासी लम्बी चद्दर तानकर ऐसी गहरी नींद सो रहे हैं कि मीठे शब्दों से तो आँख तक खोलने के लिए तैयार नहीं। सुधार का तो नाम तक नहीं लेते। कुरीतियों के खण्डनरूप कड़े कोड़े की तड़ातड़ ध्वनि से यदि जाग जावें तो ईश्वर को कोटि–कोटि धन्यवाद। धर्म गुरुओं और सामाजिक नेताओं की असावनी, प्रमाद और आलस्य से भावना और भाषा आदि एकता के चिह्न बदल जाते हैं।

–साभार, दिव्य वैदिक ज्ञान ज्योति

दानी की पहचान धन से नहीं होती

बड़ा दानी किसे माना जाए, इसे लेकर हमारे धर्म ग्रंथों में कई प्रसंग हैं। उन प्रसंगों से हमें यह शिक्षा मिलती है कि धन के हिसाब से कोई छोटा या बड़ा दानी नहीं होता है, बल्कि दान देने वाले की भावना महत्त्वपूर्ण है। बेमन से किए गए दान से पुण्य अर्जित नहीं किया जा सकता। एक बार ईसा मसीह एक धर्मस्थल में बैठे हुए थे। उन्होंने देखा कि नगर के धनी भक्तजन पास में रखे दानपात्र में सिक्के डालते तथा उनकी ओर गर्व से देखकर चरणों में बैठ जाते।

इसी बीच एक दरिद्र सी दिखाई देने वाली महिला आई और दानपात्र में दो सिक्के डालकर चुपचाप वहां से चली गई। उसने ईसा मसीह की ओर देखा भी नहीं।

ईसा ने सामने बैठे शिष्यों से पूछा, तुम्हारी निगाह में सबसे बड़ा दानी कौन है? एक शिष्य ने उत्तर दिया, जो सबसे ज्यादा धन देता है, उसे ही निर्विवाद रूप से सबसे बड़ा दानी मानना चाहिए।

ईसा ने कहा, तुम्हारी यह सोच गलत है। जो धनी है, जिसके पास आवश्यकता से ज्यादा धन है, वे ज्यादा धन दान में देते हैं, तो इसमें क्या खास बात है। असली दानी तो वह महिला थी, जिसने गरीब होते हुए भी अपनी दिन भर की मजदूरी से प्राप्त सिक्के दानपात्र में डाल दिए और घमंड से किसी की ओर देखा भी नहीं। चुपचाप सिक्के डालकर चली गई। यह करूण हृदय महिला दूसरों के मुकाबले में कहीं ज्यादा पुण्यात्मा तथा प्रभु कृपा की अधिकारी है।

शिष्यों के अन्तर्चक्षु खुल गए थे।

–सकरुण कुमार शास्त्री (इलाहाबाद)

केरल में पंडित गुरुदत विद्यार्थी स्मारक वैदिक गवेषण ग्रंथालय का शुभारंम्भ शिवरात्री दिन में संपन्न हुआ।

आर्य समाज, वेल्लिनेली के नेतृत्त्व में पंड़ित गुरुदत्त विद्यार्थी स्मारक वैदिक गवेषण ग्रंथालय का शुभारम्भ शिवरात्रि दिन में संपन्न हुआ। विख्यात संस्कृत विद्वान डॉ.पी. के. माधवन जी ने ऋषिबोधोत्सव (शिवरात्रि दिन) के शुभावसर पर इस ग्रंथालय का उद्घाटन किया। श्री ओ.एन. दामोदरन नाम्बूतिरिप्पाड के अध्यक्षता में हुए कार्यक्रम में वेल्लिनेली आर्य समाज के प्रधान श्री वि. गोविन्द दास, कार्यदर्शी श्री के. एम्. राजन, सेवा निवृत्त प्रधान आचार्य श्रीधर शर्मा, श्री वि.एन. शंकरनारायनन, श्री वि. रामकृष्णन इत्यादि व्यक्तियों ने भाग लिया। आर्य समाज और महर्षि दयानंद कृत वैदिक साहित्य तथा विभिन्न भाषाओं में प्रचारित वैदिक पत्रिका भी इस ग्रंथालय में इच्छुक जिज्ञासुओं को अध्ययन के लिए मिलेगी।

ऋषि बोधोत्सव भी मनाया! प्रातकालीन यज्ञ के बाद महर्षि दयानंद सरस्वती का अनुस्मरण भी हुआ। श्री श्रीधर शर्मा ने अपने मुख्य भाषण में महर्षि दयानंद के आदर्शों में चलने का आह्वान किया। आर्य समाज की ओर से कैन्सर रोग पीड़ित श्री जयप्रकाश जी को चिकित्सा सहाय राशि श्री ओ.एन. दामोदरन नाम्बूतिरिप्पाड ने वितर किया। बहुत श्रद्धालुओं ने इस कार्यक्रम में भाग लिया। वैदिक साहित्य का वितरण भी इस अवसर पर हुआ।

शुद्धि समाचार सम्बन्धी घोषणा

फार्म–4 (नियम 8 देखिये)

1.	प्रकाशन का स्थान	: दिल्ली
2.	प्रकाशन की अवधि	: मासिक
3.	मुद्रक का नाम	: रामनाथ सहगल
4.	क्या भारत का नागरिक है?	: हाँ
5.	मुद्रक का पता	: भारतीय हिन्दू शुद्धि सभा भारतीय हिन्दू शुद्धि सभा भवन, बिरला लाइन, दिल्ली–110007
6.	प्रकाशक का नाम	: रामनाथ सहगल
7.	क्या भारत का नागरिक है?	: हाँ
8.	प्रकाशक का पता	: भारतीय हिन्दू शुद्धि सभा भारतीय हिन्दू शुद्धि सभा भवन, बिरला लाइन, दिल्ली–110007
9.	सम्पादक का नाम	: डा. भारद्वाज पाण्डेय
	क्या भारत का नागरिक है ?	: हाँ
	सम्पादक का पता	: भारतीय हिन्दू शुद्धि सभा भवन, बिरला लाइन, दिल्ली–110007

उन व्यक्तियों के नाम पते जो समाचार पत्र के स्वामी हों तथा जो समस्त पूंजी के एक प्रतिशत से अधिक के साझेदार या हिस्सेदार हों ।

मैं रामनाथ सहगल एतद् द्वारा घोषित करता हूँ कि मेरी अधिकतम जानकारी एवं विश्वास के अनुसार ऊपर दिये विवरण सत्य हैं।

रामनाथ सहगल

दिनांक 01.04.2013 प्रकाशक

'शून्य से शिखर तक : स्वामी श्रद्धानन्द' का लोकार्पण

प्रख्यात साहित्यकार एवं सुप्रसिद्ध वैदिक विद्वान डॉ. सुन्दरलाल कथूरिया के सद्यः प्रकाशित ग्रंथ 'शून्य से शिखर तक स्वामी श्रद्धानन्द' का लोकार्पण मूर्धन्य संन्यासी स्वामी (डॉ.) आर्येश आनन्द सरस्वती (मनन–आश्रम, पिण्डवाड़ा–राज.) ने किया। उन्होंने कहा कि महर्षि दयानन्द के बाद आर्यजगत् में जिस महापुरुष को सर्वाधिक श्रद्धा के साथ याद किया जाता है वे हैं अमर बलिदानी स्वामी श्रद्धानन्द जी। उन्होंने गुरुकुल कांगड़ी की स्थापना कर वैदिक शिक्षा के प्रचार–प्रसार में अन्यतम योगदान दिया है। उनकी जीवन–गाथा को प्रस्तुत ग्रंथ में चित्रित कर डॉ. कथूरिया ने एक बड़े अभाव की पूर्ति की है, शुद्धि सभा से श्री हरबंस लाल कोहली जी ने इस अवसर पर कहा कि शुद्धि के क्षेत्र में बहुत–बड़ा काम करने वाले, दलितोद्धारक, शुद्धि सभा के संस्थापक स्वामी श्रद्धानन्द पर आयी इस पुस्तक का मैं हार्दिक स्वागत करता हूँ। केन्द्रीय आर्य युवक परिषद् के राष्ट्रीय अध्यक्ष एवं इस ग्रंथ के प्रकाशक डॉ. अनिल आर्य ने कहा कि इस ग्रंथ में स्वामी श्रद्धानन्द जी के जीवन की सभी प्रमुख घटनाएँ तो हैं ही, यह युवकों का पथ–प्रदर्शक और प्रेरक भी है।

प्रख्यात वैदिक विद्वान एवं 'अध्यात्म–पथ' के सम्पादक आ. चन्द्रशेखर शास्त्री जी ने कहा कि अन्तर्राष्ट्रीय आर्य महासम्मेलन में दुर्घटनाग्रस्त हो जाने के बाद उपचार शैय्या पर बैठे–बैठे अल्पावधि में डॉ. कथूरिया ने इस तथ्यात्मक ग्रंथ की रचना की है, यह उनकी विद्वत्ता और प्रतिभा का प्रमाण है। आर्यसमाज, बी–ब्लाक, जनकपुरी के युवा धर्माचार्य आ. योगेन्द्र शास्त्री ने कहा कि सरल, सुबोध एवं रोचक शैली में लिखित इस ग्रंथ में स्वामी जी के विषय में प्रचलित अनेक भ्रांतियों का निराकरण करते हुए डॉ. कथूरिया ने उनकी शून्य से शिखर तक की यशोगाथा को बीच–बीच में काव्यात्मक उद्धरणों से चित्रित किया। कार्यक्रम की अध्यक्षता सुप्रसिद्ध समाजसेवी श्री के.एल. गुप्ता ने की। मुख्य अतिथि के रूप में श्री रामनाथ जी सहगल (मंत्री, टंकारा ट्रस्ट एवं उपप्रधान, डी.ए.वी. प्रबंधकर्त्री समिति) एवं ऋषि चन्द्र मोहन खन्ना (अध्यक्ष, महर्षि दयानन्द धर्मार्थ पुस्तकालय एवं शोधकेन्द्र) तथा विशिष्ट अतिथि के रूप में श्री डालेश त्यागी एवं श्री वेद प्रकाश की उपस्थिति गरिमापूर्ण रही। –चन्द्रशेखर शास्त्री

गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय, हरिद्वार
प्रवेश–सूचना

आधुनिक सुविधाओं सहित आवासीय विद्यालय (10+2) गुरुकुल कांगड़ी विद्यालय विभाग हरिद्वार में सत्र 2013–14 हेतु कक्षा 01 से 9 व 11 तक प्रवेश प्रारम्भ । वैदिक संस्कारों पर आधारित एन.सी.ई.आर.टी. पाठयक्रम सभी आधुनिक विषयों के साथ छात्रों के सर्वांगीण विकास की शिक्षण संस्था। विज्ञान वर्ग में पी. सी.एम. एवं पी.सी.बी. एवं वाणिज्य वर्ग तथा कला वर्ग हिन्दी एवं अंग्रजी माध्यम प्रवेश तिथि 07 अप्रैल 2013 दिन रविवार, अधिक जानकारी के लिए सम्पर्क करें– सम्पर्क सूत्र– 9927016872, 9412025930, 9690679382, 9927084378

वेबसाइट :www.gurukulkangrividyalaya.org

–जयप्रकाश विद्यालंकार (सहायक मुख्याधिष्ठाता)

R.N.I. No. 43084/76 Posting Date : 2-3 Every Month Delhi Postal R.No. DL (N) 060/2012-14

सेवा में,

शुद्धि समाचार

अप्रैल – 2013

शुद्धि संस्कार

उ.प्र. के अलग-2 स्थानों पर 179 ईसाई व्यक्तियों की घर वापसी

22.2.13 – ग्राम-दुबरा नवी नगर बरेली में श्री सतीश भगत जी के प्रयास से ईसाई मिशनरियों द्वारा कई वर्ष पूर्व अपने चंगुल में लिए गये 52 सदस्य यज्ञ, यज्ञोपवीत के साथ वैदिक धर्मी बने।

पं. प्रणव शास्त्री द्वारा इस महत्कार्य को पूर्ण किया गया। श्री प्रणव शास्त्री के कई बार प्रवचन व धर्मोपदेश से प्रभावित ईसाई परिवार वपतिस्मा त्यागकर वैदिक परम्परा अपनाने को राजी हुए एवं सभी त्योहार संस्कार भी आर्य संस्कृति की भांति करने को संकल्पित हुए। इस अवसर पर इन ग्रामों के श्रीराम, बलदेव, सतीश जी, दिनेश शास्त्री एवं विश्वमुनि वानप्रस्थी अजय पाल, मुन्नालाल आदि प्रमुखरूप से उपस्थित रहे। समस्त कार्यक्रम का संचालन पं. प्रणव शास्त्री द्वारा कराया गया।

18.3.2013 – ग्राम निजातपुर में 18.3.2013 को 42 स्त्री-पुरुष व बच्चों ने बपतिस्मा छोड़ मन्त्र पाठ किया एवं आर्य परम्परा अपनाई। धर्म जागरण एवं शुद्धि सभा के अनथक प्रयासों से यह कार्यक्रम सम्भव किया गया। उपदेश के साथ-साथ राष्ट्र को समर्पित होने का व्रत लिया गया इसी ग्राम के इतवारी लाल, कु. किरन, सीमा, रजनी, सुषमा लाल, सहाय आदि ने गांव में ईसाईयत कभी न फैलने देने का संकल्प दोहराया। इस अवसर पर मुन्ना लाल, अजय पाल, राजवीर, आदि ने विशेष भूमिका निभाई यज्ञ आदि कार्यक्रम प्रणव शास्त्री द्वारा किया गया।

---

2. दिनांक 24.3.2013 को ग्राम-गढ़ाली, जनपद, एटा (उ.प्र.) में 13 ईसाई परिवारों के 48 स्त्री-पुरुष बच्चों का शुद्धि संस्कार करके उन्हें पुनः वैदिक (हिन्दू) आर्य में सम्मिलित किया गया। शुद्धि संस्कार इन परिवार के निवास स्थान पर किया गया।

इस शुद्धि के कार्य में भी सुधीर कुमार आर्य जी एवं उनकी टीम का पूर्ण सहयोग रहा। यह परिवार लगभग 60 वर्ष पहले ईसाई पादरियों के लालच व वहकावे में आकर ईसाई मत मानने लगे थे।

इस कार्यक्रम की विशेषता थी कि एक ईसाई पादरी की भी शुद्धि हुई और उन्होंने सहर्ष वैदिक (हिन्दू) धर्म अपनाया।

---

1. मार्च 2013 में ग्राम-बढ़ारी जनपद कासगंज (उ.प्र.) में 7 ईसाई परिवारों के 37 स्त्री-पुरुष व बच्चों को उनकी स्वेच्छा से वैदिक (हिन्दू) आर्य में दीक्षित किया गया, शुद्धि संस्कार उनके निवास स्थान पर सम्पन्न कराया गया।

शुद्धि सभा के प्रचारक श्री आशाराम जी के विशेष प्रयत्न से एवं श्री सुधीर कुमार आर्य (आर्य समाज कासगंज) का इस शुद्धि संस्कार में पूर्ण सहयोग रहा, श्री सुधीर आर्य जी शुद्धि का कार्य बड़ी लगन से कर रहे हैं।

श्री चन्द्रभान चौधरी जी द्वारा एकत्रित दान राशि

कुमारी गरिमा जी, बी-2, पश्चिम विहार, नई दिल्ली	1000/- मासिक
श्रीमती चन्द्रकला राजपाल जी, पश्चिम विहार, नई दिल्ली	500/- मासिक
श्री सुखदेव महाजन जी, विकासपुरी, नई दिल्ली	50/- मासिक
श्रीमती ऊषा कुकरेजा जी, विकासपुरी, नई दिल्ली	50/- मासिक
श्रीमती संतोष कोछड़ जी, विकासपुरी, नई दिल्ली	50/- मासिक

माह मार्च-2013 के आर्थिक सहयोगी

आर्य समाज साकेत, नई दिल्ली-110017		5100/-
आर्य समाज इन्दिरा नगर, बंगलौर, कनाटक	(पांच माह की सहायता)	5000/-
श्री मेंदीरत्ता परिवार, ओल्ड राजेन्द्र नगर	(स्व. श्रीमती लक्ष्मी मेंदीरता की पुण्य स्मृति में)	2100/-
श्रीमती स्वतन्त्रलता शर्मा जी प्रधान-आ. स., इन्दिरा नगर, बंगलौर	(स्थिर निधि हेतु)	2000/-
श्री नरेन्द्र मोहन बलेचा जी, महामंत्री-शुद्धि सभा	मासिक	500/-
श्री चेतन आर्य जी, केशवपुरम् दिल्ली		500/-
श्रीमती उमा बजाज जी, राजेन्द्र नगर, नई दिल्ली		500/-
श्री रोहित कुमार आर्य, एम.पी. मुखर्जी मार्ग, दिल्ली	आजीवन	300/-
श्री घेरये खरबन्दा जी, विकासपुरी, नई दिल्ली	आजीवन	300/-
डा. पी.एल. सूद जी, दिमाल रोड़ शिमला, हि. प्रदेश	(श्री जगजीत सूद जी द्वारा)	300/-
मंत्री जी आर्य समाज कोटला मुबारकपुर, दिल्ली		200/-
सु. सरोज तनेजा जी, नीति बाग, नई दिल्ली		100/-
श्री आर.एस. शर्मा जी, इन्द्रानगर, गाजियाबाद		150/-
श्री जयन्त वल्लभदास कोटेचा जी, पोरबन्दर		100/-
श्रीमती रमा रानी जी, पड़पड़गंज दिल्ली		100/-
श्रीमती फूला देवी जी, श्री रामचन्द्र नागपाल जी हरिनगर नई दिल्ली		100/-
श्री वन्दना जी, सुमीरा जी मयूर विहार, नई दिल्ली		100/-
श्री सुदर्शन कपूर जी, राजौरी गार्डन नई दिल्ली		100/-
श्री धनपतराय मदान जी, अजय एन्कलेव, नई दिल्ली		100/-
श्री करण सिंह तंवर जी, नारायणा गांव दिल्ली		100/-
श्री देवराज आर्य मित्र, हरिनगर, नई दिल्ली		100/-
श्री सरोज आर्या जी जंगपुरा नई दिल्ली		100/-
सुश्री वेद मदान जी, डबल स्टोरी, राजेन्द्र नगर, नई दिल्ली		100/-
श्री सुरेन्द्र कुमार ढाडाजी, ए.जी.सी.आर एन्कलेव, नई दिल्ली		150/-
श्री श्रद्धेय माता वेदवती आर्या जी स्नेही, अम्बाला शहर		100/-

श्रीमती सावित्री नन्दा जी द्वारा एकत्रित दान राशि

फ्राइडे आर्य लेडीज क्लब, न्यू राजेन्द्र नगर, नई दिल्ली	1500/-
श्रीमती सुमन मल्होत्रा जी, नोयडा (उ.प्र.)	1100/-
श्री दीपक कश्यप जी, टोडरमल रोड़, नई दिल्ली	1100/-
श्रीमती सावित्री नन्दा जी, न्यू राजेन्द्र नगर नई दिल्ली	500/-
श्रीमती मधुनन्दा जी, न्यू राजेन्द्र नगर, नई दिल्ली	500/-
श्री कमल कुमार नन्दा जी, न्यू राजेन्द्र नगर, नई दिल्ली	500/-
श्री विमल कुमार नन्दा जी, न्यू राजेन्द्र नगर, नई दिल्ली	500/-
श्रीमती ज्ञान ढींगरा जी, न्यू राजेन्द्र नगर, नई दिल्ली	500/-
श्रीमती वन्दना रानी जी, वसन्त कुंज, नई दिल्ली	500/-
श्रीमती मनीषा रानी जी, वसन्त कुंज, नई दिल्ली	500/-
श्रीमती पूनम ओमकार जी, वसन्त कुंज, नई दिल्ली	1000/-
श्री महावीर जी, प्रधान आर्य समाज गुड़गांव	501/-
श्री आशीष प्रकाश जी, आर्य समाज गुड़गांव	500/-
श्री जयदेव जी, आर्य समाज गुड़गांव	500/-
श्रीमती स्नेह ढींगरा जी, बसन्त कुंज, नई दिल्ली	300/-
श्री कर्मवीर जी, मंत्री, आर्य समाज गुड़गांव	205/-
श्रीमती कपिला जी, आर्य समाज गुड़गांव	100/-
श्री हरनारायण जी, आर्य समाज गुड़गांव	100/-

श्री आर्य रविन्द्र मेहता जी द्वारा एकत्रित दान

श्रीमती किरण मुंजाल जी, आर्य स्त्री समाज आनन्द विहार दिल्ली	100/-
श्रीमती ऊषा अहलुवालिया जी, आर्य स्त्री समाज आनन्द विहार दिल्ली	100/-
श्रीमती वेद कुमारी जी, आर्य स्त्री समाज आनन्द विहार दिल्ली	100/-
श्री खुल्लर जी, आर्य समाज आनन्द विहार दिल्ली	100/-
गुप्त दान , आर्य समाज आनन्द विहार दिल्ली	100/-

मुद्रक, व प्रकाशक – रामनाथ सहगल द्वारा गुरमत प्रिंटिंग प्रेस, 1337, संगतरासन, पहाड़ गंज, नई दिल्ली-55 दूरभाष : 23561625, से मुद्रित एवं भारतीय हिन्दू शुद्धि सभा, 6949, बिड़ला लाइन दिल्ली-7 दूरभाष : 23847244 से प्रकाशित। सम्पादक : डा. भारद्वाज पाण्डेय